भारतीय दर्शन एवं साहित्य के विकास में प्राकृत वाङ्मय का योगदान

The Contribution of Prakrit Literature for Development of Indian Philosophy & Literature

प्रधान सम्पादक
डॉ. प्रकाश पाण्डेय

सम्पादक
प्रो. श्रीयांश कुमार सिंघई
डॉ. धर्मेन्द्र जैन

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानितविश्वविद्यालय)
जयपुर परिसर, जयपुर

Scanned with CamScanner

भारतीय दर्शन एवं साहित्य के विकास में प्राकृत वाङ्मय का योगदान

The Contribution of Prakrit Literature for The Development of Indian Philosophy & Literature

प्रधान सम्पादक

डॉ. प्रकाश पाण्डेय

सम्पादक

प्रो. श्रीयांश कुमार सिंघई

डॉ. धर्मेन्द्र जैन

सह-सम्पादक

डॉ. सुमत जैन

डॉ. पुलक गोयल

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

(नैक द्वारा 'अ' श्रेणी-प्राप्त-मानित-विश्वविद्यालयः)

(भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

जयपुरपरिसरः, जयपुरम्

Scanned with CamScanner

ISBN : 978-81-926664-7-1

*** सम्पादकमण्डलम् ***

डॉ. प्रकाशपाण्डेयः
प्रो. श्रीयांशकुमारसिंघई
प्रो. रामकुमारशर्मा
प्रो. कमलेशकुमारजैनः
डॉ. धर्मेन्द्रजैनः
डॉ. सुदर्शनमिश्रः
डॉ. सुमतजैनः
डॉ. पुलकगोयलः

*** Editorial Board ***

Dr. Prakash Pandey
Prof. Shriyansh Kumar Singhai
Prof. Ram Kumar Sharma
Prof. Kamlesh Kumar Jain
Dr. Dharmendra Jain
Dr. Sudarshan Mishra
Dr. Sumat Jain
Dr. Pulak Goyal

© प्रकाशकाधीनम्

मूल्यम् 600 रूप्यकाणि

संस्करणम्-प्रथमम् 2014 ईस्वीये
300 प्रतयः
टंकक एवं मुद्रक :
आइडियल कम्प्यूटर सेन्टर, जयपुर

प्रकाशकः
प्राचार्यः
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
जयपुरपरिसरः, त्रिवेणीनगरम्, जयपुरम्-18

© Under the Publisher

Price : Rs. 600/-

Edition : First 2014
300 Copies

Type Setting & Printer :
Ideal Computer Centre,
Jaipur

Publisher
Principal
Rashtriya Sanskrit Sansthan
Jaipur Campus, Triveni Nagar, Jaipur-18

Scanned with CamScanner

व्याख्याप्रज्ञप्ति में लोक का स्वरूप

दामोदर शास्त्री

व्याख्याप्रज्ञप्ति (अपर नाम – भगवती सूत्र) द्वादशांगी का पांचवा अंग (आगम) है। विशाल आकार वाले इस आगम में जैन तत्त्वज्ञान के प्रायः सभी पक्ष चर्चित हुए हैं। 'लोक' के स्वरूप के विषय में भी इस आगम में महत्त्वपूर्ण व उपयोगी विवरण प्राप्त होते हैं। इस निबन्ध में उन्हें संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है।

'लोक' शब्द का अर्थ है – जो देखा जाये (लोक्यते इति लोकः)। व्याख्याप्रज्ञप्ति में कहा गया है कि अजीव (पुद्गल) आदि के विविध परिणामों के द्वारा जिसका लोकन किया जाता है, प्रलोकन किया जाता है, वह 'लोक' है।[1]

अन्य परवर्ती आचार्यों ने भी प्रायः इस अर्थ को स्वीकारा है। उदाहरणार्थ– जहाँ पदार्थ स्थित एवं परिणमित होते देखे जाते हैं, वह 'लोक' है।[2] आचार्य अकलंक आदि आचार्यों के मत में 'जो सर्वज्ञ द्वारा 'केवल ज्ञान' से देखा जाये, वह 'लोक' है।'[3] लोक के सभी पदार्थ अपने त्रैकालिक अवस्थाओं (पर्यायों) सहित सर्वज्ञ जिनेन्द्र के केवलज्ञान रूपी दर्पण में स्पष्ट प्रतिबिम्बित होते रहते हैं,[4] इसलिये इसे 'लोक' कहा जाता है।

षड्द्रव्यात्मक लोक

लोक में स्थित प्रत्येक पदार्थ 'परिणामी नित्य' है, अर्थात् उसमें प्रतिक्षण नवीन-नवीन पदार्थ उत्पन्न होते और विलीन होते हैं, किन्तु 'परिणामी' होते हुए भी अपने स्वरूप से च्युत न होने के कारण वे 'नित्य' कहे जाते हैं।[5] उक्त परिणामिनित्यता वाले पदार्थों को एक नाम से पुकारा जाए तो वह है– 'द्रव्य'। द्रव्य शब्द की निरूक्ति भी यही है कि जो प्रतिक्षण नवीन-नवीन पर्यायों को प्राप्त करता है, वह 'द्रव्य' है।[6] जिस प्रकार समुद्र अस्तित्वहीन (घटता-बढ़ता व नष्ट) नहीं होता, इसी प्रकार अनादिनिधन द्रव्य में पर्यायें उठती व नष्ट होती हैं, किन्त द्रव्य स्वरूपच्युत नहीं होता।[7] द्रव्य को 'सत्' भी कहा गया है।[8] द्रव्य के छः भेद हैं – जीव, पुद्गल, धर्म (धर्मास्तिकाय), अधर्म (अधर्मास्तिकाय), आकाश व काल।[9] द्रव्य के दो भेद भी माने गए हैं – जीव व अजीव। और अजीव के पांच भेद हैं – पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश व काल।[10] वस्तुतः आकाश और शेष पांच द्रव्यों का समष्टि रूप ही 'लोक' है।[11] इसलिए आचार्यों ने 'लोक' को षड्द्रव्यात्मक कहा है।[12] कुछ

Scanned with CamScanner